कर्बला के दुखित हुसैन[अ०]

आयतुल्लाहिलउज़्मा सैय्यिदुलउलमा सै० अली नक़ी नक़वी ताबा सराह
अनुवादक- मिर्ज़ा सज्जाद हुसैन

कौन है जिसने मुहर्रम में ''हुसैन-हुसैन'' की आवाज़ न सुनी होगी।

बहुधा आपने इस आवाज़ के साथ कुछ मनुष्यों को नंगे सर शोक संगीत पढ़ते एवं छाती पीटते भी देखा होगा तथा सम्भव है आपने रोने की आवाज़ें भी सुनी हों।

मानवीय सहानुभूति से विवश होकर अवश्य आपके हृदय से सहानुभूति के भाव जागृति हुये होंगे तथा आपने विचार किया होगा कि ये हुसैन कौन थे जिन पर आज तक अश्रुधारा प्रवाहित की जाती है।

कृपा करके थोड़ा सा समय देकर इस पत्रिका का अध्ययन करें तो आपको ज्ञात हो जायगा कि हुसैन कौन थे उनका ध्येय क्या था तथा उस ध्येय के वशीभूत होकर उन्होंने क्या किया तथा उसका क्या परिणाम हुआ।

''वंश एवं पैत्रिक विशेषताएं''

अरब देश में मक्के की भूमि पर बनी हाशिम का वंश उच्च स्थान रखता है। इस कुल में अब्दुल मुत्तलिब सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति थे उनके दो पुत्र थे अब्दुल्लाह और अबूतालिब। अब्दुल्लाह के पुत्र हज़रत मुहम्मद थे जो इस्लाम धर्म के संस्थापक एवं मुसलमानों के पैग़म्बर (दूत) हैं तथा अबूतालिब के पुत्र अली थे जो हज़रत मुहम्मद के सहायक एवं साथी थे जो मुहम्मद के बाद मुसलमानों के शासक एवं हज़रत मुहम्मद के उत्तराधिकारी हुये। हज़रत मुहम्मद की एक पुत्री थीं फ़ातिमा जिनका वह अति सम्मान करते थे उन पुत्री का विवाह हज़रत मुहम्मद ने अली के साथ किया जिन्हें वह अपने सम्बन्धियों एवं मित्रों में सर्वाधिक प्रिय थे। अली और फ़ातिमा से दो पुत्र उत्पन्न हुये बड़े का नाम हसन था जो अली के बाद उनके उत्तराधिकारी हुये और छोटे का नाम हुसैन था जिनका नाम आप आज तक सुना करते हैं।

जन्म

हज़रत मुहम्मद अपने परिवार सहित मक्के की ज़मीन छोड़कर मदीने आये तथा यहीं बस गये। हिजरत इसी का नाम है इस हिजरत के तीसरे वर्ष हुसैन दुनिया में आये। आपके शुभ जन्म से आपके नाना हज़रत मुहम्मद, पिता अली, माता हज़रत फ़ातिमा सब अति आनन्दित हुये तथा परिवार में यह एक गौरवपूर्ण वृद्धि हो गयी।

बाल्यकाल

हुसैन 7 वर्ष की आयु तक अपने नाना हज़रत मुहम्मद की गोद में पले। हज़रत मुहम्मद को अपने इस छोटे नवासे से अति प्रेम था। ऐसी प्रसन्नता एवं आनन्द के दिन हुसैन को आजन्म प्राप्त न हुये।

नाना के बाद

हुसैन 7 वर्ष के थे जब उनके नाना हज़रत मुहम्मद का देहान्त हो गया। यह दुख समस्त परिवार-प्राणियों के लिये एक महान कष्ट था। हुसैन ने यह अनुभव किया कि वह उनके भाई एवं उनके माता-पिता लोगों की दृष्टि में वह आदर नहीं रखते जो इसके पूर्व था। उन्होंने यह भी देखा कि उनके पिता ने उस उच्च आदर्श के कारण जिसके हज़रत मुहम्मद पालनकर्ता थे, तथा मुसलमानों कों संगठित बनाये रखने के लिए समस्त अप्रिय परिस्थितयों का सामना धैर्यपूर्वक किया यहाँ तक कि कष्ट एवं दुख सहकर एक वर्ष के भीतर ही हुसैन की दयालु माता स्वर्गवासी हो गयीं। अली एकान्तवासी हो गये तथा हुसैन ने देखा कि धाम (काबा) की चहल-पहल जब सन्नाटे में

परिवर्तित हो गयी है।

25 वर्ष अली ने शांतिपूर्वक व्यतीत किये जब मुसलमानों ने तत्काली सम्राट (उसमान) को मार डाला तो वह अली के पास आए और कहा कि आप हमें मार्ग दर्शाइये। हज़रत अली ने बहुत अस्वीकार किया किन्तु अत्यन्त विवश करने पर हज़रत अली ने इस उत्तरदायित्व को स्वीकार कर लिया किन्तु अभी थोड़ा ही समय बीता था कि आपके पुरातन शत्रुओं एवं उनके सम्बन्धियों तथा मित्रों ने आपका विरोध किया तथा आपको युद्ध करने पर बाध्य कर दिया यहाँ तक कि पाँच ही वर्ष पश्चात् आपको नमाज़ पढ़ते में शीश नवाते समय क़त्ल कर दिया।

अब उनके ज्येष्ठ पुत्र इमाम हसन उनके उत्तराधिकारी हुये किन्तु परिस्थितियाँ ऐसी ही थीं कि आपको इस्लाम धर्म रक्षा के प्रति अपने पिता के शत्रु शाम के बाग़ी शासक माविया से समझौता करना पड़ा तथा तत्पश्चात् बिल्कुल एकान्तवासी जीवन व्यतीत करने पर भी शाम के शासक माविया की ओर से विष दे दिया गया।

आचरण एवं चरित्र

हुसैन ने अपनी उत्तम-प्राकृति के साथ-साथ ऐसी उच्च शिक्षा-दीक्षा प्राप्त की थी जो उनके सद्आचरणों एवं उत्तम चरित्र का प्रतीक है फिर उनको विभिन्न परिस्थितयों एवं अवसरों का सामना करना पड़ा था जिनमें उनको भावनाओं के विपरीत अपने चरित्र के बल से काम लेना पड़ा था। यर्थाकारेण उनके चरित्र में बल, दृढ़ता एवं अडिग विश्वासादि गुणों का समन्वय हो गया था। वह दानी थे एवं मानव को लाभ पहुँचाने का यत्न करते थे। वह ज्ञानी ऐसे थे कि लोग धार्मिक कठिनाइयों को सुलझाने के लिए आते थे। वह दयावान थे ऐसे कि शत्रुओं पर भी समय पड़ने पर दया दृष्टि डालते थे एवं त्याग-भावना ऐसी थी कि अपनी आवश्यकता को त्याग कर दूसरों की आवश्यकताएं पूरी करते थे। क्या तुम ऐसे मनुष्य के चरित्र की उच्चता का अनुमान लगा सकते हो जिसने उस लश्कर (सेना) को जो स्वयं उससे युद्ध करने के लिए आया था प्यासा देखकर अरबी मरूभूमि एवं जलशून्य मार्गों में अपने साथ का सब पानी पिलवा दिया तथा अपने और अपने साथियों बल्कि स्त्रियों एवं बालकों तक का कोई विचार न किया। वह ऐसे उच्च चरित्रवान थे कि उन्होंने अपने संगठन की संख्या को स्थायी रखने के लिए भावी शंकाओं एवं अत्याचारों को गुप्त नहीं रखा बल्कि बार-बार भावी कष्टों एवं शंकाओं को अवश्यमेव बताकर उनको एवं प्राण-संरक्षण के प्रति अपने साथ से चले जाने की मंत्रण दी तथा यह सिद्धान्त (रीति) उस समय तक प्रयोग करते रहे जब तक कि किसी एक मानव के भी अशुद्ध विचार में ग्रस्त होने का भय था।

वह शांतिप्रिय एवं समझौता-प्रेमी भी ऐसे थे कि उन्होंने अन्तिम समय तक शत्रु से समझौता करने का स्वयं अपनी ओर से भरसक प्रयास किया किन्तु उसके साथ दृढ़ निश्चयी ऐसे थे एवं साहस ऐसा रखते थे कि प्राण दे दिये परन्तु जो पहले दिन सत्य समझकर धारण कर चुके थे उससे एक इन्च न हटे।

उन्होंने पुत्र होने के नाते पितृ-भक्ति की एवं लघु भ्राता होने के कारण भ्राता की आज्ञा-पालन किया इस प्रकार कि उनके इस कर्तव्य पालन में शिथिलता न आयी तथा फिर कर्बला में एक शासक के रूप में कर्बला की घटना में एक पूर्ण संगठन का व्यवस्थीकरण किया इस प्रकार कि उनके व्यवस्थीकरण का उदाहरण मिलना नितान्त दुष्कर है। उनकी दृष्टि ने व्यक्ति-परख का वह आश्चर्यजनक उदाहरण प्रस्तुत किया कि इतने कठिन एवं दुष्कर कार्य के लिए जिन साथियों का चुनाव करके अपने साथ ले लिया था उनमें से एक ने भी स्वामी-भक्ति एवं प्राणों की बाज़ी लगाने में कमी न की एवं सब एकत्र तथा एक हृदय होकर उनके ध्येय की पूर्ति में संलग्न रहे यहाँ तक कि प्राण दे दिये। यह दृश्य कुछ ऐसे आदर्शों एवं गुणों का पता दे रहे हैं जो हुसैन को मानव-संसार का एक आदर्श तथा उच्च उदाहरण सिद्ध करते हैं। हुसैन में आकर्षण-शक्ति केवल इस कारण नहीं है कि वह निरापराध क़त्ल हो गये एवं दुखी तथा निरापराधी के साथ सहानुभूति मानव-प्रकृति है बल्कि उनके गुण तथा विशेषताएं हैं जो उनकी जीवन घटनाओं से प्रकट है उनकी ओर समस्त मानव के हृदयों को मोड़ते हैं तथा प्रत्येक सचेत एवं सक्रिय मानव इस पर बाध्य है कि वह हुसैन का आदर दृष्टि से देखे तथा उनके गौरवपूर्ण व्यक्तित्व का

आदर व सम्मान करे।

सहनशीलता

पाठकगण आगे आने वाले दृश्यों से अशुद्ध परिणाम निकाल सकते हैं यदि वह हुसैन की युवावस्था आदि में उनकी सहशीलता पर विचार न कर लें। आप को ज्ञात है कि हुसैन को 7 वर्ष की आयु में कष्टों, कठिनाईयों एवं अत्याचारों का सामना करना पड़ा उनके पिता हज़रत अली के मुक़ाबले में अन्य व्यक्ति सशक्त हो गये तथा हज़रत अली ऐसे वीर एवं बलवान ने इस्लाम के हित के कारण धैर्य से काम लिया। यह समय 25 वर्ष तक रहा। इसी बीच इमाम हुसैन ने बाल्यकाल की सीमा पार करके नवयुवावस्था के दिन बिताकर पूर्ण युवक हो गये। मानव की आयु का यह वह समय होता है जिसमें उसकी भावनायें और इच्छायें अप्रशंसनीय कार्य प्रतिपादित करा देती हैं। परन्तु विरोधी वातावरण होने के बाद भी इमाम हुसैन ने कोई ऐसा कार्य नहीं किया जो व्यवस्थीकरण तथा अपने पिता के द्वारा अपनाये हुये मार्ग के विपरीत हो बल्कि इतिहास के पृष्ठ साक्षी हैं कि जब तीसरे ख़लीफ़ा हज़रत उसमान को घेरकर उन पर खाना पानी बंद कर दिया गया तो हज़रत अली ने अपने सुपुत्रों इमाम हसन और इमाम हुसैन को खाना और पानी हज़रत उसमान तक पहुँचाने के लिए भेजा था। हज़रत अली के शासन काल में विरोधियों की अत्याचारपूर्ण कार्यवाहियों के मुक़ाबले में इमाम हुसैन सम्मिलित रहे किन्तु जब सिफ़्फ़ीन के युद्ध में कुरआन नैज़ों (भाले के समान एक अस्त्र) पर ऊँचे किये गये और अपने साथियों के पारस्परिक विरोध से बाध्य होकर हज़रत अली को युद्ध स्थगित करने का निर्णय करना पड़ा तो युवक इमाम हुसैन ने निःसंकोच उसको स्वीकार कर लिया और अपने भाई इमाम हसन के साथ उस समझौते पर हस्ताक्षर किये जो युद्ध स्थगित करने के हेतु लिखा गया था। हज़रत अली शहीद हो गये और उनके स्थान पर इमाम हसन अधिष्ठाता स्वीकार किये गये तथा आपको अपने विरोधी से संधि करने की आवश्यकता प्रतीत हुई तो इमाम ने भी उन शर्तों का पालन किया। दस वर्ष का समय यूँ ही गुज़र गया तथा उस काल में भी ऐसी घटनाएं घटित होती रहीं जो धैर्य का बन्धन तोड़ देतीं परन्तु इमाम हुसैन ने कोई क़दम नहीं उठाया यहाँ तक कि संसारिक बातों से बिल्कुल ही अलग हो गये और शांत रहे-- ऐसा व्यवहार होते हुए भी आपके ज्येष्ठ भ्राता इमाम हसन को विष द्वारा मार डाला गया और यह इतिहास की विचित्र घटना है कि उनको अपने नाना हज़रत मुहम्मद के पहलू में दफ़न न होने दिया गया बल्कि झगड़ा हो गया यहाँ तक कि शव पर तीर चलाये गये जिनमें से सात तीर तो ताबूत (वह बक्सा जिसमें शव रखा जाता है) तोड़कर हज़रत इमाम हसन के शरीर तक पहुँचे परन्तु भाई की वसीयत और अप्रिय परिस्थित को दृष्टि में रखते हुए आप शान्त ही रहे और अपने भाई को रसूल के रौज़े से अलग स्थान पर दफ़न कर दिया। इन घटनाओं से भलिभांति स्पष्ट है कि इमाम हुसैन कोई भावुक व्यक्ति न थे अपितु वह धीर और सहनशील थे तथा कभी क्रोध में आकर ऐसा कार्य न करते थे जो व्यवस्था, धैर्य और शांति के प्रतिकूल हो। कठिन से कठिन परिस्थितयों में भी शांतिपूण रहना आपका विशेष गुण था- यदि उस शांति रहने से उन बहूमूल्य उद्‌देश्यों को कोई हानि न पहुँचे जिनके वह स्वयं और उनके नाना, भाई और पिता संरक्षक रहे थे।

कर्बला की घटना के कारण

अब आपको अनुमान करना चाहिए कि ऐसा धीर, सहनशील, शांतिप्रिय तथा संधि प्रेमी व्यक्ति कैसे एक ऐसा क़दम उठा सकता है जिसमें उसके समस्त साथियों के गले कट जाने की पूर्ण आशा हो बिना असाधरण तथा विशेष कारणों के। फिर वह कारण क्या थे?

अच्छा सुनिये यह तो आपको ज्ञात ही है कि हुसैन हज़रत मुहम्मद के नवासे (दौहित्र) थे और हज़रत मुहम्मद उस धर्म के संस्थापक थे जिसका नाम है ''इस्लाम''।

इस्लाम के पूर्व अरब की सामाजिक, आर्थिक तथा व्यावहारिक दशा जितनी अंधकारमय थी उसका आप इतिहास में अध्ययन कर सकते हैं। पारस्परिक समानता व एकता कोई वस्तु न थी और शक्ति, बाहुबल और अधिकार (उच्च-पद) ही सब कुछ था इसका एक प्रमाण यह भी है कि एक बड़े आदमी के क़त्ल हो जाने पर

केवल उसके क़त्ल करने वाले ही को न मार डाला जाता था बल्कि विरोधी पक्ष सैकड़ों व्यक्ति मृत्यु के बाद उतार दिये जाते थे तब समझा जाता था कि उसके ख़ून का बदला लिया गया। इसके विपरीत यदि कोई छोटा (दरिद्र) मनुष्य क़त्ल होता था तो उसका ख़ून माफ़ था।

यह बड़े और छोटे का अंतर अनेकों नैतिक पापों का स्त्रोत था और मानवता को कलंकित कर रहा था। इसका कारण यह था कि उन्होंने भौतिकवाद को ही सब कुछ समझ लिया था और उससे उच्च किसी ईश्वरीय सत्ता को होने का भाव शेष रह गया था। अतएव भौतिकता ही उनके दृष्टि में सब कुछ थी।

इस्लाम जो एक महत्वपूर्ण क्रांति लेकर आया था उसने सबसे पहले इसका मुख्य कारण दूर करते हुए लोगों की भौतिकता की सीमा से आगे निकल कर एक सार्वभौमिक शक्ति (अल्लाह) की ओर आकर्षित किया जिसके अनुसार समस्त मानव एक ही हैसियत रखते थे तथा फिर उसने पूर्वभूत के सभी ऊँच नीच के भेदभाव को मिटाकर नवीन आदर्श प्रस्तुत किया कि जो व्यक्ति मानवीय कर्त्तव्यों को सबसे अधिक प्रतिपादित करता है वह सर्वश्रेष्ठ है। इस आदर्श के अनुसार शक्ति, बाहुबल, अधिकार वंश और कुल की श्रेष्ठता तथा संख्या की अधिकता यह सब बातें मूल्यहीन हो गयीं। उसने कहा कि प्रत्येक व्यक्ति दूसरे के सम्मान है जब तक कि मानवता के गुणों में अपने आपको उससे श्रेष्ठ सिद्ध न करे।

इससे आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा व्यवहारिक दशाओं में महान् परिवर्तन हो गये इस्लाम ने इस क्रांति उत्पन्न करने में अत्याधिक सफ़लता प्राप्त की। बहुत से श्रेष्ठ कुलों के सदस्यों का विवाह किया गया उन वंशों में जो प्राचीन काल में तुच्छ समझे जाते थे। सम्भ्रान्त व्यक्ति के बदले में यह असम्भव हो गया कि एक से अधिक व्यक्ति क़त्ल किया जाये।

बहुत से परिवारों तथा विदेशी मनुष्यों जो इसके पूर्व पशुओं के समान समझे जाते थे उनको अपने मानवीय गुणों के कारण इतनी अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त हुई जो बड़े-बड़े ख़ानदानी अरबों को न थी और बहुधा अरबों को सरदारी स्वीकार करना पड़ी उन लोगों की जिन्हें वे वंश के दृष्टिकोण से अपने बराबर न समझते थे अथवा शक्ति व बाहुबल के आधार पर शक्तिहीन समझते थे।

प्रत्येक क्रांति के बिल्कुल विपरीत एक दूसरी क्रांति भी प्रारम्भ हो जाती है जो क्रांति से उत्पन्न होने वाली विशेषताओं को मिटा देना चाहती है और पुरानी बातों की पूजा करना ही अपना ध्येय बनाती हैं।

इस्लाम को इस हैसियत से उन समस्त क़बीलों का सामना करना पड़ा जो इसके पूर्व अपने आपको शक्ति व बाहुबल का अधिकारी समझते थे। चाहे वह वंशीय श्रेष्ठता के कारण, चाहे वह धन-सम्पत्ति की अधिकता के कारण, चाहे सम्प्रदाय क़बीले की उच्चता के कारण।

हज़रम मुहम्मद को इस सम्बन्ध में कई युद्ध लड़ना पड़ें जिसमें उहद, बद्र, ख़न्दक़ के युद्ध अति प्रसिद्ध हैं। इनमें बनी उमय्या का सरदार अबुसुफ़यान बहुत आगे-आगे था और वह विरोधी संगठन का व्यवस्थापक था।

इन युद्धों में यद्यपि इस्लाम अनुयायियों की ही सफ़लता प्राप्त हुई परन्तु प्रत्येक सफलता विरोधी संगठन के हृदय में बदले की भावना और तीव्र कर देती थी यद्यपि प्रकट रूप में इस्लाम सबसे शक्तिशाली संगठन बन गया था परन्तु उसके विरोध में शत्रुता की भावनायें गुप्त रूप से अत्याधिक सुदृढ़ हो रही थीं यहाँ तक कि वह समय आया कि जब विरोधी पक्ष की पराजय ने उसे हथियार डालने पर बाध्य कर दिया तथा विरोधी संगठन के सदस्य यहाँ तक कि अबुसुफ़यान और उसके परिवार के व्यक्ति तक मुसलमान हो गये परन्तु स्मरण रखना चाहिए कि दबी हुई और पराजित जातियों की कुछ भावनायें होती हैं। इस्लाम द्वारा पराजित हुआ संगठन अर्थात बनी उमय्या और उनके प्रशंसक जब मुसलमान हो गये तो उनकी मनो-वैज्ञानिक दशा यह थी कि वह सदैव उस अवसर की प्रतीक्षा में रहते थे जिससे इस्लाम को हानि पहुँचायी जा सके और यदि उसका अन्त न कर सकें तो कम से कम उसके उद्देश्यों को परिवर्तित करके उन आदर्शों तथा विशेषताओं को मिटा दें जो उसने प्रस्तुत किये हैं एवं उसके परदे ही में सही, परन्तु उन

विशेषताओं को चालू कर दें जो इस्लाम के पूर्व अरब में प्रचलित थीं।

हज़रत मुहम्मद के जीवन-काल में उनके इस उद्देश्य की पूर्ति दुष्कर थी परन्तु हज़रत मुहम्मद के बाद उनको अपने उद्देश्यों में सफ़लता प्राप्त करने की पर्याप्त आशा थी।

हज़रत मुहम्मद के पश्चात् इस्लामी क्रांति के संरक्षक, पैग़म्बर के उत्तराधिकारी उनके घराने वाले वे व्यक्ति थे जिन्हें वह बराबर अपने कार्यों में सम्मिलित रखते थे तथा जिन्हें। उन्होंने अपने उद्देश्य से भली भांति परिचित करा दिया था एवं उनकी शिक्षा-दीक्षा इस प्रकार कर दी थी कि वह अपने कथनों तथा व्यवहारों से उन उद्देश्यों के प्रतीक बन सकें। इनमें और इसके विरोधी दूसरी क्रांति के प्रतिनिधियों में वैमनस्य अनिवार्य था और यह एक वास्तविकता है कि प्रत्येक बार परीक्षा (संघर्ष) के अवसर पर हज़रत मुहम्मद के वास्तविक उत्तराधिकारियों के साथी कम निकले और यह क्रम सदैव जारी रहा। इसके कारण आर्थिक भी हैं राजनीतिक भी, मनोवैज्ञानिक भी हैं और वंशीय भी।

आपको ज्ञात हो चुका है कि इस्लाम प्राचीन विशेषताओं को मिटाकर समानता का संदेश लेकर आया उसने श्रेष्ठाता केवल मानवीय कर्त्तव्यों के पूर्ण करने के आधार पर ही निश्चत की थी। धन-सम्पत्ति का इस प्रकार वितरण कि जिससे असमानता व भेदभाव उत्लन्न हो जाए इस्लाम के सिद्धान्तों के प्रतिकूल था तथा इसके (इस्लाम के) संरक्षक भी इसके निकट न जा सकते थे यथाकारेण हज़रत मुहम्म्द के सम्बन्धियों के लिए यह असम्भव था कि वह कोष में धन एकत्रित करके धनाठय बनें और विशेषतया उन लोगों को धन-धान्य से परिपूर्ण करें जिन से उनको अपने अधिपत्य को दृढ़ बनाने की आशा हो। यहाँ तो यह दशा थी हज़रत अली से उनके भाई अक़ील तक अप्रसन्न हो गए इस कारण कि वह चाहते थे कि उनको समस्त मुसलमानों से अधिक कुछ दिया जाए और हज़रत अली इसके लिए तैयार न हुए। फिर जब अपने भाई की यह दशा थी तो दूसरों का क्या वर्णन।

इसके प्रतिकूल दूसरे संगठन के व्यक्तियों को इसका ध्यान न था। वह अपने अधिपत्य को सुदृढ़ बनाने के लिए ख़ज़ाने के मुँह खोल देते थे और जिससे उनका उल्लू सीधा होता था उसको अत्याधिक धन सम्पत्ति प्रदान करते थे।

इसके अतिरिक्त इस्लाम ने उन समस्त प्रतिष्ठित सज्जनों और संगठनों की विशेषताओं को समाप्त कर दिया था जो इसके पूर्व मान्य व उच्च पदाधिकारी थे और एक बिल्कुल विभिन्न माप (स्टैण्डर्ड) निश्चत किया था। अतएव इस्लाम को मिटाने में प्रत्येक का अधिपत्य (अधिकार) स्थिर रह सकता था। फिर यह भी है कि पिछली पराजयों का सबके हृदय पर अमिट प्रभाव था तथा सब ही में बदला लेने की भावना पायी जाती थी और फिर यह बात भी थी कि रसूल के आदेशों के सभी संरक्षक एवं विशेष परिवार (बनी हाशिम) के व्यक्ति थे जिन से अनेक अरब परिवारों से पहले ही द्वेष व ईर्श्या थी अतएव ये वंशीय (पारिवारिक) द्वेष भी विरोध करने पर बाध्य करते थे।

बनी उमय्या का अधिपत्य मुसलमानों में एक सूबेदार शासक के रूप में प्रारंभ हुआ। शाम में माविया का राज्यपाल (गर्वनर) नियुक्ति किया जाना इसका श्री गणेश था। उन्होंने अपने शासन-काल के प्रारम्भ ही से अपनी राजनीतिक नीति राजसीय ठाट-बाट से परिपूर्ण रखी।

मुसलमानों के प्रमुख अधिपति की ओर से इस पर आलोचना की गयी तो एक चतुर राजनीतिक की भांति यह कहकर शान्त कर दिया गया कि क्योंकि शाम की सीमा रोम देश से मिली हुई है अतः यहाँ इस्लाम की प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिए इसी प्रकार की तड़क-भड़क की आवश्यकता है।

समझने वाले समझे कि इस प्रकार वास्तव में इसलाम की उस प्रतिष्ठा व विशेषता को मिटाना है जो उसने अत्यधिक प्रयत्न से सांसारिक तड़क-भड़क को मिटाकर स्थापित की थी इसमें उन्नति उस समय पूर्णतया हो गई जब इस्लाम का प्रमुख अधिपत्य भी तात्कालिक ख़लीफ़ा के रूप में बनी उमय्या के एक व्यक्ति को प्राप्त हो गया। आर्थिक और राजनीतिक दृष्टिकोण से पूर्ण-रुपेण इस समय बनी उमय्या सशक्त हो गए थे और वह विशेषतायें पूर्णतया लुप्त होने लगीं जो इस्लाम के साधारण और दीन-पालक, नियमों ने स्थापित की थीं। इसका उदाहरण है अबूज़र ग़फ़ारी का देश से निकाला जाना,

अम्मारे यासिर और इब्ने मसऊद को यातनाएं पहुँचायीं जाना। यह भी ज्ञातव्य है कि यह वे लोग थे जो इस्लाम के प्रस्तुत किये गए सिद्धान्तों की सीमा में अति प्रतिष्ठित थे परन्तु इस शक्ति बाहुबल की सीमा में बिल्कुल ही अमान्य व अपमानित हो गए थे। इसके अर्थ यह थे कि इस्लामी क्रांति की अपेक्षा प्राचीन बातों की पूजा करने वाली क्रांति विजय प्राप्त करने लगी तथा इस्लाम की निशचित सीमाओं के स्थान पर अन्य सीमाएं बना ली गयीं।

हज़रत अली की ख़िलाफ़त का थोड़ा समय पूर्णतया उमवी-अधिपत्य के मुक़ाबले में बीत गया जिसमें हज़रत अली की बहुत थोड़ी सफ़लता प्राप्त हुई।

हज़रत अली की मृत्यु (शहादत) के पश्चात् इस अधिपत्य में और भी वृद्धि हो गई यहाँ तक कि हज़रत इमाम हसन को संधि कर लेने पर बाध्य हो जाना पड़ा इस प्रकार आपने विरोधी शक्ति के हिंसात्मक व्यवहारों को समझौते की शर्तों द्वारा सीमित करने का प्रयास किया परन्तु इमाम हसन को विष द्वारा शहीद कर दिया गया तथा संधि की शर्तों का विरोध किया जाने लगा एवं राजनीतिक अधिमत्य इस साहस की सीमा तक पहुँचा कि हजर बिन अदी और उनके अनेकों साथियों जो अत्याधिक ईश-भक्त, संयमी एवं कर्तव्यपारायण थे तलवार द्वारा मार डाला गया तथा अम्र बिनलहुमक अलख़िज़ाई को जो इस्लामी दृष्टिकोण से उच्च स्थान रखते थे सर काट कर भाले पर ऊँचा उठाया गया। इसका परिणाम यह था कि इस्लाम के आध्यात्मिक व ईश्वरीय दृष्टिकोण का अन्त होने लगा तथा मुसलमानों में भी "ईश्वरीय शक्ति है" का व्यावहारिक कलमा पढ़ा जाने लगा। सत्य की पूजा समाप्त हुई। आत्मिक स्वतंत्रता अर्न्धान हो गई। धर्म और सत्य सुनहरे सिक्कों पर बेचे जाने लगे तथा भौतिक व नश्वर शक्ति की उपासना की जाने लगी।

यह दशाएं फिर भी सहन करने योग्य थीं यदि माविया की ओर से इस शर्त का विरोध न होता कि उनके बाद किसी उत्तराधिकारी के नामज़द करने का अधिकार न होगा।

इमाम हसन ने अत्यंत दूरदर्शिता से यह शर्त निश्चित की थी परन्तु उमवी राजनीति अपने उद्देश्य में असफ़ल रहती यदि इस शर्त का पालन किया जाता अतएव माविया ने अपने बाद के लिए अपने पुत्र यज़ीद को उत्तराधिकारी बनाया और केवल नामज़द नहीं किया अपितु समस्त इस्लामी संसार से भगीरथ प्रयास द्वारा यज़ीद को ख़लीफ़ा मानने की स्वीकृति भी प्राप्त की गयी।

यज़ीद के कथन तथा व्यवहार (आचरण) यदि वह न भी होते जो इसके बाद संक्षेप में वर्णन किये जायेंगे तब भी उसको उत्तराधिकारी बनाना संधि-पत्र की शर्तों के प्रतिकूल होने के नाते अनुचित था किन्तु मुसलमानों में शक्ति व साम्राज्य से इतना भय उत्पन्न हो गया था कि किसी का ध्यान भी इस ओर न गया और यदि ध्यान जाता भी तो प्रकट करने का साहस न था।

हज़रत मुहम्मद के सम्बन्धियों में इस समय सर्वाधिक माननीय व्यक्ति हज़रत इमाम हुसैन थे। आप बनी उमय्या के व्यवहारों का दीर्धकाल से अनुभव कर रहे थे कि वह किस प्रकार इस्लाम के मूल-सिद्धान्तों के विरूद्ध हैं फिर भी उनको आशा थी कि शायद माविया के उपरान्त इस दशा में कुछ परिवर्तन हो जाए परन्तु यह उस क्रान्तिकारी राजनीति की अंतिम चाल थी कि राजाओं की भांति अपने बाद के लिए अपने पुत्र को बिना उसके चरित्र तथा आचरण को देखे हुए नामज़द कर दिया। आपने इसे पूर्णतया अनुभव किया और अनुमान किया कि आप का क्या कर्तव्य है।

माविया भी समझते थे कि इस मामले में सर्वाधिक सम्बन्धित व्यक्ति इमाम हुसैन हैं अतएव उन्होंने आपको मिलाने को अत्याधिक चेष्टा की परन्तु परिणाम स्वरूप असफ़लता ही मिली। यह बनी उमय्या पर गहरी चोट थी जिसे माविया की बुद्धिमता समझ चुकी थी। इसे इमाम हुसैन की सूझबूझ समझना चाहिए कि आपने अपने व्यवहार को शांति तक सीमित रखा। आप जानते थे कि विपक्षी इस शांति को भंग करने में अत्याधिक हिंसा व अत्याचार का प्रयोग करेगा जिसके लिये आप तैयार थे परन्तु आप यह न चाहते थे कि आपको किसी अत्याचारपूर्ण क़दम उठाने या बग़ावत करने को दोष दिया जाए।

माविया ने संसार को ख़ूब देखा था। वह हुसैन के इस मौन को अपनी पराजय समझकर व्याकुल थे किन्तु

वह जानते थे कि यदि हम कठोरता करेंगे तो वह इस पराजय का अन्तिम बिन्दु होगा अतः हुसैन चाहते थे कि मैं शांतिपूर्वक रहूँ और विरोधी अत्याचार करे और माविया का आश्य था हम अत्याचार न करें तथा हुसैन की शांति भी शेष न रहे।

स्मरणीय है कि कर्बला का युद्ध यहीं से प्रारम्भ होता है परन्तु यह एक अध्यात्मि वैमनत्य था जो न मालूम कब तक चालू रहता यदि माविया का प्राणान्त न हो जाता एवं नवयुवक अनुभवहीन, राज्य-शासन मिल जाने के कारण अत्याधिक घमंडी व अभिमानी यज़ीद राज्य सिंहासन पर बैठ न जाता।

हुसैन की बैअत (यज़ीद को ख़लीफ़ा मानने) के प्रश्नसे पृथकता और शांति माविया को भी उतना ही कष्ट दे रही थी जितनी यज़ीद को परन्तु माविया को अत्याचार करने के परिणाम का ज्ञान था और यज़ीद को न था। यज़ीद ने हुसैन की शांति को शक्ति व साम्राज्य के बल से तोड़ना चाहा तथा बलपूर्वक आप से बैअत (स्वयं को ख़लीफ़ा मनवाने) की इच्छा की।

वलीद इब्ने अक़बा जो मदीने में उसका गर्वनर था उसे माविया की मृत्यु के समाचार के साथ ही यह आदेश भेजा कि शीघ्रतिशीघ्र इमाम हुसैन से मेरी बैअत ले लो यदि ऐसा न करें तो उनका शीश काटकर भेज दो। यह था वह प्रथम चरण अत्याचार व हिंसा का जो यज़ीद की ओर से उठाया गया यदि वलीद इस आदेश का पूर्णतया पालन करना चाहता तो मदीना ही कर्बला बन जाता। इमाम के सामने इस माँग का इस प्रकार प्रस्तुत किया जाना मानो हुसैन की प्रथम सफ़लता और उमवी राजनीति की प्रारंभिक पराजय थी। उसने समझा था कि इमाम हुसैन का मुझको ख़लीफ़ा न मानना एक सामयिक बात है जो इस धमकी के कारण शीघ्र ही परिवर्तित हो जायेगी और हुसैन ने जो मार्ग ग्रहण किया वह सोच समझकर उसके समस्त अंतिम परिणामों का अनुमान कर लेने के बाद। वह देख रहे थे कि इस्लामी उद्देश्यों, विशेषताओं एवं सिद्धान्तों में अत्याधिक परिवर्तन हो गया है परन्तु इस पर भी अभी तक नाम-मात्र के इस्लाम का आवरण पड़ा हुआ है। अतएव जनसाधारण उसका उचित अनुमान नहीं लगा सकते। हुसैन चाहते थे कि विरोधी दल को हिंसा की अंतिम श्रेणियों पर पहुँचाकर उसको अमानवीय (पाशविक) भावनाओं को इस प्रकार प्रदर्शित करने का अवसर प्रदान करें कि जनता को पूरी तरह अनुभव हो सके और आँखों के सामने से पर्दे हट जाएं।

इमाम हुसैन के लिए अपने उद्देश्य की प्राप्ति का इसके अतिरिक्त कोई और साधन न था।

यह तो सम्भव था कि वह अपने प्राणों की रक्षा कर लेते परन्तु यदि प्राणों का ही संरक्षण अभीष्ठ होता तो वह प्रारम्भ में ही यज़ीद को ख़लीफ़ा मानने से इन्कार न करते। प्राणों का संरक्षण उनका दृष्टिकोण केवल उसी सीमा तक था जब तक कि उनके उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों की भी रक्षा हो परन्तु यदि उद्देश्य का सरंक्षण प्राण देने पर ही निर्भर हो तो उनके लिए प्राणों की आहुति देना अत्यंत सरल कार्य था।

उद्देश्य के सरंक्षण के केवल दो साधन हो सकते हैं एक विरोधी दल से निकलकर संधि की शर्तों के द्वारा, दूसरे युद्ध द्वारा विजय प्राप्त करके। यह दोनों साधन इमाम हुसैन के लिए असम्भव थे। संधि इमाम हसन ने की थी और संधि की शर्तों का विरोध ही यह भयानक रूप धारण कर चुका था जो इमाम हुसैन के सामने थी यद्यपि माविया चरित्र के दृष्टिकोण से यज़ीद की अपेक्षाकृत अधिक उच्च स्तर के थे फिर जब माविया के साथ संधि में असफ़लता प्राप्त हुई तो यज़ीद के साथ संधि करने का परिणाम उससे भी अधिक भयानक ही होगा। जबकि यज़ीद के आचरण वह थे जो प्रकट रूप में भी इस्लामी सिद्धान्तों व उद्देश्यों के प्रतिकूल थे। वह नमाज़-रोज़े तक का पाबन्द नहीं था। शादी-ब्याह के बन्धनों (जो इस्लाम ने निश्चित किए थे) का भी पालन न करता था तथा इस्लाम ने जिन वस्तुओं को हराम कहा था जैसे शराब आदि उसका भी खुल्लम खुलल्ला प्रयोग करता था तथा उसके साथ इस्लामी ख़िलाफ़त का दावा था। इस दशा में यदि इमाम हुसैन भी जो कि इस्लामी सभ्यता व संस्कृति के रक्षक थे, यज़ीद की बैअत कर लेते तो स्मरण रखना चाहिए कि इस्लाम की सभ्यता व संस्कृति तथा सामाजिक सिद्धान्त स्थायी रूप से वही बन जाते

जिस ओर बनी उमय्या की राजनीति लिये जा रही थी तथा जिसका यज़ीद अपने समय में उत्कृष्ठ उदाहरण था।

कहने वाले कह सकते हैं कि इमाम हुसैन के बाद भी तो बहुत से मुस्लिम-राजे उन्हीं आचरणों में ग्रस्त हुए हैं जिनमें यज़ीद ग्रस्त था। परन्तु स्मरणीय है कि हुसैन के बलिदान ने इस्लाम की सभ्यता व सिद्धान्त को इतना जागृति कर दिया कि अब उसके ख़िलाफ़ जो आचरण तथा कार्य होते हैं वे बिल्कुल व्यक्तिगत दोषों की हैसियत रखते हैं तथा उनका कोई मानसिक प्रभाव समाज या संगठन पर नहीं पड़ता। ख़तरा अब सदैव के लिए दूर हो गया है कि इस्लाम का स्थायी सिद्धान्त और व्यावहारिक नियम समझ लिया जाए क्योंकि हुसैन और उनके साथियों ने इस्लाम के वास्तविक रूप का कर्बला में न मिटने वाला उदाहरण प्रस्तुत कर दिया तथा उसकी धार्मिक महत्ता को भली भांति स्पष्ट कर दिया है। अब यदि इस्लाम को कलंकित करने के लिए बनी उमय्या व बनी अब्बास का उदाहरण दिया जाए जो तत्काल ही इस्लाम की ओर से सफ़ाई देने के लिए हुसैन का बलिदान इतिहास के पृष्ठों पर सामने आ जाता है।

यज़ीद और इमाम हुसैन के उद्देश्य बिल्कुल तत्सम और विपरीत थे। यज़ीद अज्ञानता के युग के पलटाने का सूरमा और हुसैन आध्यामिकता तथा मानवता को स्थिर रखने के उत्तरदायी। वह शक्ति व साम्राज्य का सिक्का चलाने में प्रयत्नशील और हुसैन धर्म-प्रचार में संलग्न, वह इस्लामी विशेषताओं को मिटाने पर तुला हुआ और हुसैन इस्लामी विशेषताओं को स्थिर बनाये रखने पर कमर कसे हुए।

फिर भला बतलाइये कि इमाम हुसैन और यज़ीद में संधि क्योंकर हो सकती थी।

दूसरा ढंग यह था कि आप शक्ति का मुक़ाबला शक्ति से करते तथा विजय प्राप्त करके यज़ीद को परास्त करते परन्तु आपको ज्ञात हो चुका है कि शक्ति प्रतियोगिता में हज़रत मुहम्मद के सम्बन्धियों के साथी सदैव कम ही होते थे। इस प्रकार का अनुभव पूर्णरूपेण हज़रत अली और इमाम हसन के समय में हो चुका था।

फिर संसार की सोचने-विचारने की शक्ति इतनी लुप्त हो चुकी थी कि यदि आप सेना एकत्रित करके युद्ध भी करते तो जो उसकी वास्तविक हैसियत थी उसके समझने वाले बहुत कम होते और यह समझने वाले अत्याधिक होते कि यह राज्य सिंहासन प्राप्त करने के उद्देश्य से दो राजाओं का युद्ध है तथा राजनीतिक दृष्टिकोण यज़ीद का पल्ला भारी रहता यदि इस प्रकार से इमाम हुसैन को विजय प्राप्त भी होती (जो प्रकट रूप से असम्भव थी) तो उसका प्रभाव एक सामयिक राजसीय क्रांति के रूप में होता जिसका प्रभाव दीर्धकालीन न होता तथा बनी उमय्या पर जो बाध्य इस्लाम का परदा था वह अब भी उसी प्रकार पड़ा रहता जैसे इसके पूर्व था और यदि कुछ लोग हुसैन को सत्य (हक़) पर समझते भी होते तो विरोधी दल को खताये इज्तेहादी (सत्य की खोज करने में त्रुटि) का प्रमाण पत्र दे देते जैसा कि इसके पूर्व सिफ़्फ़ीन के युद्ध में हुआ। इस प्रकार बनी उमैय्या की आंतरिक भावनाओं का इस सीमा तक अन्वेषण कि जो उनसे सहानुभूति का कोई पहलू मानवता के हृदय में बाक़ी न रखे कदापि नहीं हो सकता था जब तक कि उनसे अत्याधिक घृणा उत्पन्न न होती उस समय तक उन विशेषताओं की पूर्णतिया पराजय न हो सकती थी जिसे बनी उमय्या ने व्यावहारिक रूप से स्थापित करना चाहा था।

ज्ञात हुआ कि संधि करना भी असंभव था तथा युद्ध करना भी। फिर अब तृतीय मार्ग कौन सा था? वही जिसे हुसैन ने अपनाया और यदि हुसैन न अपनाते तो उसका अनुमान करना भी हमारे लिए असंभव था।

आपने साम्राज्य का मुक़ाबला असहाय से कसरत (अधिक्य) का मुक़ाबला ऐक्य से था अत्याचार का मुक़ाबला सहनशीलता से किया तथा यह वह युद्ध का ढंग था। जो इससे पूर्व संसार ने नहीं देखा था। आपकी दृष्टि में विजय और परास्त का अर्थ बिल्कुल भिन्न था। विजय का अभिप्राय यह न था कि आप शत्रु की सेनाओं को रौंदकर उसके देश पर अधिकार प्राप्त कर लें तथा पराजय का यह तात्पर्य न था कि आपके सब साथी मार डाले जाएं और स्वयं भी क़त्ल हो जाएं।

आपके अनुसार विजय के यह अर्थ थे कि कहाँ

तक आप अपने सिद्धान्त के समर्थन में कठिनाइयों का मुक़ाबला करते हैं और कहाँ तक आपका शत्रु अपने उद्देश्यों के संरक्षण में हिंसा से काम लेता है। शत्रु की हिंसा का प्रत्येक चरण एक मोर्चा था जिसे हुसैन विजय करते थे तथा उसका अत्याधिक हिंसात्मक चरण हुसैन के अपने उद्देश्य के अनुसार पूर्ण विजय थी।

इसी उद्देश्य को दृष्टि में रखते हुए हुसैन ने अत्यन्त प्रबन्ध किया था। शक्ति का मुक़ाबला शक्ति से करना होता तो सेना की संख्या में वृद्धि करते उन्होंने ऐसा नहीं किया। संख्या को यथासम्भव कम से कम किया परन्तु उन्होंने अपने साथ ऐसे-ऐसे ईशे-भक्त, संयमी, पवित्र तथा चरित्रवान व्यक्तियों को लिया जिनकी ईश-भक्ति, संयमता एवं चरित्र की उच्चता व पराकाष्ठा की सम्पूर्ण देश में विशेष ख्याति थी। उन्होंने ऐसे वयोवृद्ध अपने साथ लिये जिनकी भौहें लटक कर आँखों तक आ गई थीं तथा उन्होंने ऐसे युवक अपने साथ लिये जिनके यौवन व सुन्दरता का उदाहरण न था, कुछ ऐसे बालक भी साथ लिये जिनके हाथों में तलवार उठाने की शक्ति न थी बल्कि दूध पीते बच्चे को भी अपने साथ लिया और पर्दानशीन (पर्दे वाली) महिलाओं को जो हज़रत मुहम्मद के परिवार से सम्बन्धित थीं तथा जिनमें हज़रत मुहम्मद की नवासियाँ भी मौजूद थीं अपने साथ लिया।

तुम इस प्रबन्ध से समझ सकते हो कि हुसैन का उद्देश्य क्या था और वह किस प्रकार अपने विरोधी से युद्ध करना चाहते थे। याद रक्खें कि हुसैन के पास यह वो मशीन गन थी जिनको इमाम हुसैन बनी उमय्या के हिंसा रूपी भवन को नष्ट करने का अत्यन्त शक्तिशाली साधन समझते थे और निःसंदेह उनका विचार उचित था। इमाम हुसैन के हेतु श्रेष्ठतम मार्ग यही था और इसके अतिरिक्त कोई अन्य साधन न था।

मदीने से प्रस्थान

इमाम हुसैन ने बैअत की याचना को सुनकर पहला क़दम यह उठाया कि मदीने को छोड़ दिया इसमें शांति-प्रियता के प्रमाण के साथ-साथ अपने उद्देश्यों के प्रचार का पहलू भी निहित था। यदि आप मदीने में शहीद हो जाते तो विरोधी दल की ओर से इस पर अनेकों प्रकार से आवरण डाल दिये जाते और जिस प्रकार इमाम हसन का क़त्ल आज तक सन्देहात्मक है उसी प्रकार इमाम हुसैन की शहादत भी छुपी रहती तथा बलिदान का बह उद्देश्य प्राप्त न होता जो इमाम हुसैन के सामने था।

मक्के में शरण

आपने मदीने से निकलकर ईश-धाम (काबे) में शरण ली। बाह्य रूप में यह केवल अपनी रक्षा करने का एक ढंग था परन्तु इसमें एक रहस्य यह भी था कि मक्का समस्त अरब देशों के निवासियों के एकत्रित होने का स्थान था। इमाम का मक्के में निवास करना लोगों को इस प्रश्न पर बाध्य करता था कि किन कारणों से हज़रत मुहम्मद के दौहिन्न ने नाना की समाधि छोड़ी है।

इस रूप में यज़ीद के साथ आपके शांतिपूर्ण विरोध और उसके कारणों की घोषणा पूरे देश में हो गयी तथा उन अशुद्ध विचारों का अन्त हो गया जो इस सम्बन्ध में फैलाई जा सकती थीं।

मक्के से रवानगी (प्रस्थान)

आप का मक्के से प्रस्थान बिल्कुल असम्भावित परिस्थितयों में हुआ था। एक ऐसे अवसर पर जबकि हज के केवल दो दिन शेष रह गए थे और दूर-दूर से लोग सिमट-सिमट कर मक्के में एकत्रित हो रहे थे ऐसे अवसर पर आपका हज न करके मक्के से रवाना हो जाना असाधारण परिथितयों का ही परिणाम हो सकता था। आपको सन्देह था कि आप की उपस्थिति में मक्के की पवित्र भूमि पर क़त्ल न हो जाए। आपने ईश्वरीय धाम के सम्मान पर अपने शांतिपूर्ण जीवन को बलिदान कर दिया।

क्या आपका इस असम्भावित रूप से प्रस्थान मक्का के विभिन्न क़बीलों की समूह में नितांत अनुभव उत्पन्न होने का कारण न हुआ होगा?

उस अवसर पर जब कि समाचार पहुँचाने के साधन न थे इमाम ने अपने इस व्यवहार से इस्लामी संसार को परिचित कराने के वे साधन उपलब्ध किये जिन से बढ़कर कोई साधन सम्भव न था।

कर्बला में प्रवेश

इमाम हुसैन को कूफ़े के निवासी धर्म मार्ग प्रदर्शित कराने हेतु बहुत समय से बुला रहे थे। जब आपका मक्के से प्रस्थान करना अनिवार्य हो गया तो कूफ़े की ओर रवाना हुए परन्तु इस बीच कूफ़े में भारी

परिवर्तन हो चुका था और यज़ीद की आज्ञा से इब्ने ज़ियाद का शासन स्थापित हो गया था जिसने कूफ़े के चारों ओर फौजें (सेनाएं) एकत्रित करा दी थीं। अभी इमाम रास्ते ही में थे कि कूफ़े की सेना आकर रोड़ा बन गयी और आपको आगे बढ़ने या वापस जाने से रोका विवश होकर आप कर्बला नामक स्थान पर उतर पड़े। यह वही गौरवमयी पुण्य भूमि (कर्बला) है जो उस अद्वितीय बलिदान की केन्द्र निश्चित हुई, जो ''कर्बला की घटना'' नाम से आज सुविख्यात है।

कर्बला पहुँचने के बाद

इब्ने ज़ियाद को ज्ञात हुआ कि इमाम हुसैन कर्बला पहुँच गए हैं तो उसने सेनाएं भेजना प्रारम्भ किया और इतनी अधिक फ़ौजें कि विस्तृत जंगल व्यक्तियों के आधिक्य से परिपूर्ण दृष्टिगोचर होने लगा।

समझ लीजिए कि कूफ़े की सम्पूर्ण युद्ध करने योग्य जनसंख्या कर्बला में सिमट आयी थी। उमरे साद इस सेना का नायक था।

शांति स्थापित करने का प्रयास और उसमें असफ़लता

इमाम हुसैन ने प्रयत्न किया कि किसी प्रकार युद्ध छिड़ने की स्थित न आए और शांति भंग न हो। इसी उद्देश्य से उमरे साद के साथ पत्र-व्यवहार से सम्पर्क स्थापित किया और बात इस पर समाप्त हुई जाती थी कि आप इराक़ में न रहेंगे तथा यदि आवश्यकता प्रतीत हो तो अरब का देश भी त्याग देंगे एंव किसी दूर स्थान पर चले जाएंगे।

ध्यान दीजिए तो इस प्रकार भी हुसैन की ही विजय थी अर्थात आपका देश त्याग भी उसी उद्देश्य की एक घोषणा थी जिसके लिए आप को प्राणों की आहुति देनी पड़ी। क्योंकि धार्मिक एवं वैधानिक दृष्टिकोण से जब तक उद्देश्यों का संरक्षण प्राणों का बलिदान दिये बिना हो सके तब तक ऐसा करना आत्म हत्या ही है अतएव आप दूसरे साधनों की खोज कर रहे थे।

उमरे साद ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया था और उसने इब्ने ज़ियाद को लिखा था कि अल्लाह की कृपा से लड़ाई-झगड़ा समाप्त हो गया। हुसैन इस बात को मानते हैं कि वह जहाँ से आए हैं वहीं वापस चले जाएं अथवा देश को छोड़ दें। परन्तु इब्ने ज़ियाद जिसे हज़रत मुहम्मद के सम्बन्धियों से अत्यन्त शत्रुता थी कुछ झगड़ा-प्रेमी दुष्टों के समझाने के कारण इस पर तैयार न हुआ और इसी पर अड़ा रहा कि हुसैन, यज़ीद को धार्मिक अधिष्ठाता स्वीकार कर लें तभी उनके प्राणों का संरक्षण हो सकता है। यह वह बात थी जिसे इमाम हुसैन पहले से तय कर चुके थे कि असम्भव है।

उन्हें बैअत करना होती तो पहले दिन ही क्यों न कर लेते अब मृत्यु को सामने देखकर वह इस बात पर तैयार हो जाते तो वह एक मध्यम श्रेणी के व्यक्ति सिद्ध होते और वह हुसैन न होते कोई अन्य व्यक्ति हो सकता था।

वास्तव में इमाम हुसैन और यज़ीद के मध्य जो खाईं थी वह व्यक्तिगत या निजी नहीं अपितु इस्लामी और सामूहिक थी।

यह तो दैवयोग की बात थी कि मुक़ाबले में बनी उमय्या के वंश का एक व्यक्ति यज़ीद था। नहीं वे बनी उमय्या न होते कोई और क़बीला होता बल्कि बनी हाशिम के परिवार का ही कोई व्यक्ति होता परन्तु यदि वह उन उद्देश्यों का विरोध करता जिसके इमाम हुसैन संरक्षक थे तो आप उसके मुक़ाबले में यूँ ही खड़े हो जाते जिस प्रकार यज़ीद के मुक़ाबले पर खड़े हो गए।

इमाम हुसैन का उद्देश्य

प्रत्येक युद्ध के कुछ न कुछ कारण व उद्देश्य होते हैं। इमाम हुसैन के उद्देश्य बहुत सीमा तक उनके आचरणों एवं व्यवहारों से प्रकट हैं जिन पर किसी हद तक इसके पूर्व प्रकाश डाला गया है इसके अतिरिक्त आपके कथन जो विभिन्न भाषणों के रूप में हम तक पहुँचे हैं आपके उद्देश्यों की व्याख्या करते हैं।

शोक का विषय है कि इतिहास ने उन समस्त भाषणों को सुरक्षित व एकत्रित नहीं किया जो आप ने विभिन्न अवसरों पर दिये हैं परन्तु जहाँ तक सुरक्षित हो सके हैं वह किसी सीमा तक इस सम्बन्ध में हमारे लिए पर्याप्त हैं।

सर्वप्रथम उस समय जब वलीद ने आपके सामने यज़ीद की बैअत करने का प्रस्ताव रखा है आप ने चाहा कि बात टल जाए (सामयिक रूप में) परन्तु मरवान नामक व्यक्ति के बुरी तरह हस्तक्षेप के कारण आप

क्रोधित हो गए। आपने वलीद को सम्बोधित कर के कहा ''हम हज़रत मुहम्मद के सम्बन्धी हैं और उनके ख़ज़ाने। मानव की विशेषताओं तथा गुणों का हम से प्रारम्भ तथा हम ही पर अन्त है। यज़ीद कुकर्मी, दुष्ट मदिरा-पान करने वाला, निरापराधियों को क़त्ल करवाने वाला तथा प्रकट रूप से पाप करने वाला है- मेरा ऐसा व्यक्ति उसकी बैअत नहीं कर सकता।''

इसमें अपने उत्तरदायित्वों को बतलाते हुए आपने अपने और यज़ीद के मध्य विरोध के कारणों पर पूर्णतया स्पष्ट रूप से प्रकाश डाला है। आपके व्यवहार अपनी अंतिम साँस तक इसी कथन की व्याख्या हैं और बस।

कर्बला में उमर बिने साद से आप ने कहा ''अल्लाह की सौगंध मैं अपमानित दशा में अपने को तुम्हारे अधिकार में न दे दूँगा और न गुलामों की भांति तुम्हारे सामने से भागूँगा।''

यह थी वीरता और कर्तव्यपारायणता की मृत्यु की घोषणा। इसी को एक दूसरे स्थान पर शाम-निवासियों को सम्बोधित करके इस प्रकार कहा।

''ऐ अल्लाह के बन्दों मैं पनाह माँगता हूँ ऐसे व्यक्ति से जो घमंड और अभिमान करता है तथा प्रलय के दिन पर विश्वास न करता हो। मृत्यु आदर के साथ श्रयेस्कर है उस जीवन से जो अपमान के साथ हो।''

पहले वाक्य में झगड़ा प्रेमी व दुष्ट चरित्र यज़ीद की निंदा है और दूसरे वाक्य में इसकी व्याख्या है कि भौतिक शक्ति के आगे उच्च उद्देश्यों के विरूद्ध शीश नवा देना मानव की प्रतिष्ठा के प्रतिकूल है तथा उस जीवन से जो इस प्रकार हो मृत्यु श्रेष्ठ है।

इसी को दूसरे शब्दों में यूँ कहा है कि मृत्यु अपमान व अनादर से श्रेष्ठ है। 9 मोहर्रम की रत्रि के भाषण में अपने साथियों को सम्बोधित करके कहा ''मैं ससम्मान मृत्यु को जीवन समझता हूँ और अपमानित जीवन को मृत्यु समझता हूँ।

युद्ध का पूर्ण निश्चय

नौ मोहर्रम को इब्ने ज़ियाद का पत्र उमरे साद के पास आया जिस ने संधि को असम्भव बना दिया था बैअत या क़त्ल और यह बात उमरे साद भी जानता था कि बैअत करना इमाम हुसैन के लिए असम्भव है अतएव उसके पास अब युद्ध के अतिरिक्त कोई अन्य साधन न था। यथाकारेण उसने तत्काल ही हुसैन की सेना पर आक्रमण कर दिया।

इमाम ने इस असम्भावित आक्रमण का किसी प्रकार की व्याकुलता से स्वागत नहीं किया बल्कि बहुत नम्रतापूर्वक आपने अपने भाई अब्बास को भेजकर हमले का कारण पूछा और यह ज्ञात होने पर कि इब्ने ज़ियाद का आदेश युद्ध करने के लिए आ गया है- आप ने केवल एक रात तक युद्ध स्थगित करने की माँग की।

अज्ञानी व्यक्ति एक रात तक युद्ध स्थगित रखने को इमाम हुसैन की कमज़ोरी समझ रहे होंगे परन्तु जिसने हुसैन के जीवन चरित्र का अध्ययन किया है वह इसका विचार भी असम्भव समझता है।

एक रात तक युद्ध स्थगित रखने में एक रहस्य यह निहित था कि आप मृत्यु की पूर्ण आशा हो जाने के बाद अपने साथियों को अपने विचारों को तोल लेने का अवसर प्रदान कर दें और एक बार पुनः यह कह दें कि जो साथ छोड़कर चला जाना चाहे वह जाए। यथाकारेण आपने उस रत्रि को समूह की संख्या में हृास करने का यत्न किया तथा लोगों को सोचने विचारने का पूर्ण अवसर दिया। अब जो लोग इमाम हुसैन के साथ रह गए थे वे मृत्यु को अवश्यमेव समझते हुए पूर्णतया इस पर तैयार थे अतएव उनमें नाम-मात्र को भी कमज़ोरी न थी दूसरे यह कि विरोधी दल को भी एक रात्रि का अवसर धर्म व अधर्म, सत्य व असत्य की तुलना के लिए दिया तथा इसी रात्रि तक युद्ध स्थगित रखने का परिणाम था कि उमरे साद की सेना का एक बड़ा अफ़सर हुर बिन यज़ीद रियाही जो सर्वप्रथम हुसैन को घेर कर कर्बला लाने का उत्तरदायी था उमरे साद की सेना से अलग होकर इमाम हुसैन की ओर आ गया और आपकी सहायता में प्राणों की आहुति दी।

स्मरण रखिये कि एक सत्य की ओर बुलाने वाले की यह महान सफ़लता है यदि वह एक व्यक्ति को भी अंधकार से निकालकर प्रकाश में ले आए और याद रखिये कि हुसैन के सिद्धान्त की यह एक बड़ी सफ़लता केवल उस रात तक युद्ध स्थगित रखने का परिणाम थी जो शत्रु से मांग कर प्राप्त की गई थी।

दस मोहर्रम का प्रातःकाल

रात गई और दस मुहर्रम का प्रातःकाल हुआ उमरे साद ने रणक्षेत्र में अपनी सेना को पंक्तिबद्ध किया और हुसैन ने भी अपनी छोटी सी सेना का व्यवस्थीकरण किया उस समय आपने आवश्यकता अनुभव की कि विरोधी दल को अपनी निरापराधता पर अंतिम बार सचेत कर दें तथा उस विशाल सेना को अपने उद्‌देश्यों से फिर परिचित करा दें कहीं ऐसा न हो कि अज्ञानता में कोई व्यक्ति इस महापाप में ग्रस्त हो जाए और उसका उत्तरदायित्व आप पर रहे।

आप एक ऊँट पर सवार हुए और सेना के सामने जाकर एक प्रभावोत्पादक एवं भावपूर्ण भाषण दिया जिसमें अपने कुल (वंश) की विशेषताओं, अल्लाह के साथ अपने सम्बन्ध, अपनी चरित्रिक व नैतिक शुद्धता, कुकर्मों से पृथकता, और हज़रत मुहम्मद के कथन जो आपके बारे में मुसलमानों के बीच सही (उचित) माने जाते हैं उनको एक-एक करके प्रस्तुत किया और फिर पूछा इस दशा में किस कारण तुम मुझको क़त्ल करना श्रेयस्कर समझते हो।

सेना के लोग जो उच्च्व पद मिल जाने की लालसा के दास बने हुए थे इससे क्या प्रभावित होते परन्तु आपने अपना कर्तव्य निभाया और दिखा दिया कि एक शांति स्थापित कराने वाला कभी भी अपने कर्तव्य से विमुख नहीं होता।

युद्ध का आरम्भ

सर्वप्रथम उमरे साद ने एक बाण हुसैनी सेना की ओर फेंका और कहा गवाह रहना कि सबसे पहला तीर मैंने फेंका है उसी के साथ हज़ारों तीर फेंके गए- यह था युद्ध का संदेश। हुसैन इसके लिए पहले से तैयार थे उन्होंने अपने वीरों को अवाज़ दी कि हाँ सेनानियों। खड़े हो जाओ। शत्रुओं के तीर तुम्हारी ओर युद्ध का संदेश लेकर आ गए।

क्या चित्र खींचा जा सकता है उस अवसर का जब एक ओर हज़ारों व्यक्तियों का समूह हो और दूसरी ओर थोड़े से भूखे-प्यासे मनुष्य हों जिनमे मुश्किल से लड़ने के योग्य सौ व्यक्ति होंगे वरन्‌ शेष तो कम आयु वाले बच्चे थे, अधिक आयु वाले वृद्ध थे परन्तु उन्होंने इस प्रकार युद्ध किया कि इतिहास के पृष्ठ पर उसका वर्णन स्वर्णक्षरों में अंकित है।

वह मृत्यु को प्राप्त हुए परन्तु उनकी शूरता और वीरता की याद आज तक जीवित है और सदैव जीवित रहेगी।

साथियों का अंत (क़त्ल)

सर्वप्रथम हुसैन के मित्र और साथी जो आप से ख़ानदानी सम्बन्ध न रखते थे वह एक-एक करके रणक्षेत्र में गए और शहीद हुए।

यह एक आश्चर्यजनक व्यवस्थीकरण था जो इस कठिन व्याकुलता से परिपूर्ण अवसर पर अत्याधिक दृढ़ता से स्थापित किया गया था कि जब तक साथियों में से एक भी जीवित रहा हुसैन का कोई सम्बन्धी रण-क्षेत्र में न जाने पाया और इसके बावजूद कि तीरों का मेंह बरसता तथा घमासान का युद्ध हुआ। फिर भी आपके किसी सम्बन्धी के घाव तक न लगने पाया।

नवयुवक पुत्र की शहादत

सम्बन्धियों में सर्वप्रथम इमाम हुसैन ने अपने नवयुवक पुत्र अली अकबर को रणक्षेत्र में भेजा। उनकी माता लैला शिविर में थीं और पिता शिविर के द्वार पर तथा उनका पुत्र शत्रुओं की सेना में छुपा था।

पिता ने देखा और माता से सुन लिया कि अली अकबर तलवारों से टुकड़े-टुकड़े हो गए परन्तु धैर्य धारण किये रहे। वह इस बलिदान के लिये पहले से तैयार थे। वह यह समझ कर संतुष्ट थे कि उनकी स्कीम का एक अंश पूर्ण हुआ।

''भांजों, भतीजों और दूसरे सम्बन्धियों की शहादत अक़ील के पुत्र, जाफ़र के बेटे और सबसे अधिक हुसैन के दयालु भाई इमाम हसन की औलाद एक के बाद एक इमाम हुसैन के सामने क़त्ल होते रहे। इनमें से अपने भाई के अव्यसक पुत्र हज़रत क़ासिम को रणक्षेत्र में जाकर शहीद होने की आज्ञा देना आपके लिए अति कठिन था परन्तु उद्‌देश्य की महत्ता के सामने यह भी सरल था। इमाम हुसैन ने इसे भी स्वीकार कर लिया।

हुसैन की सेना के सेनापति की बिदाई

जब इमाम हुसैन की ओर कोई लड़ने वाला न रहा तो आपके भाईयों की बारी आई और सब शहीद हो

गए तो अंत में आपकी सेना के सेनापति तथा आपके लघु भ्राता हज़रत अब्बास ने जिहाद करने की आज्ञा चाही। हुसैन न चाहते थे कि यह आपकी सेना का चिन्ह जो आपके जिहाद की उच्चता व महत्ता का घोतक था वह झुक जाये परन्तु अन्य कोई कुर्बानी शेष न रह गई थी अतः अब्बास को भी मैदान में भेज दिया।

संसार ने देखा कि जब तक अब्बास में जान बाक़ी रही इस्लामी धवज कांधों पर लहराता रहा। यहाँ तक कि हाथ कट गए। फिर भी ध्वज को भुजाओं से संभाला अब्बास घोड़े से गिरे। हुसैन का ध्वज भूमि पर गिर पड़ा। वह झुक गया परन्तु नहीं-नहीं वह ध्वज इतना ऊँचा हुआ कि वही ध्वज प्रत्येक सत्य-उपासक के कांधों पर है। जब तक विश्व में सत्य का चिन्ह भी शेष है जब तक इस्लाम का नाम है उस समय तक हुसैन का ध्वज संसार में ऊँचा रहेगा।

अंतिम बलिदान

हुसैन के पास अब कुछ न रह गया था परन्तु विरोधी दल की हिंसा का अंतिम बाण शेष था और उसके लिए हुसैन निशाने खोज रहे थे। उन्हें मानव-जगत के सम्मुख एक ऐसा निरापराध उपहार प्रस्तुत करना था जिस पर किसी विधान या धर्म के दृष्टिकोण से पाप करने का इल्ज़ाम न आ सकता हो।

ढूँढ लिया हुसैन ने यह अंतिम उपहार ढूँढ लिया। रबाब की गोद में दूध पीता बालक प्यास से सिसकियाँ ले रहा था। वृद्ध पिता ने बालक की दशा देखी और शिविर के द्वार पर उसे गोद में लिया। कहा जाता है कि शत्रु की सेना से बच्चे के लिए पानी माँगा।

यह था हुसैन का अंतिम हथियार

मानवता के हाथ पाँवो में कपकपी बढ़ गई। दया व कृपा के संसार में अंधेरा छा गया। जब हुरमुला ने बाण धनुष में जोड़ा और बच्चे की गर्दन का निशाना बना लिया। बच्चे ने जान दे दी और हुसैन के उद्देश्य में कभी न समाप्त होने वाली जान पड़ गई।

नुमाएशी (आडम्बरपूर्ण) मानवता की नक़ाब का यह अंतिम तीर था जो निर्दोष व पापहीन बालक की गर्दन में तोड़ दिया।

अब प्रत्येक धुंधली दृष्टि पर भी खुल गया कि उस के मनुष्यों का जितना समूह था वह मानवता से कितना दूर था और इमाम हुसैन जैसा व्यक्ति उनके साथ संधि कैसे कर सकता था।

बलिदान की पूर्णतया

हुसैन के पास अब कुछ न था केवल स्वयं थे। अपना सर कटा देना हुसैन के लिए अत्यन्त सरल था परन्तु उन्हें तो अपनी सहनशीलता का प्रदर्शन करना था।

अब जबकि किसी अन्य व्यक्ति की प्रतीक्षा न थी तो हुसैन थे और रण-क्षेत्र।

उतना जितना कि मानव शक्ति के अनुसार अपने संरक्षण के लिए आवश्यक था युद्ध किया और संसार ने देख लिया कि हुसैन ने इस कर्तव्य को भी उसी प्रकार निभाया जैसा इतनी दुर्दिशा, कठिनाईयों एवं विपत्तियों में कोई दूसरा कर सकता था। परन्तु एक मनुष्य का शरीर तथा तलवारों व तीरों की वर्षा- शरीर घावों से चकनाचूर हो गया। घोड़े की पीठ पर संभला न गया। योद्धा भूमि पर गिर पड़ा तथा शत्रुओं का चारों ओर से घेरा। अंततः सत्य की मूर्ति तलवारों का भाग बन गया। सत्य की गर्दन कट गयी और मानवता का सर भाले की नोक पर ऊँचा किया गया।

शत्रु ने वह सब कुछ किया जो उसकी बर्बरता की अंतिम श्रेणी हो सकती थी। यदि इमाम हुसैन को केवल अपने मार्ग से हटाना अभिष्ठ होता तो यह उद्देश्य आपके क़त्ल से पूर्ण हो गया परन्तु नहीं आपके शव को घोड़ों को दौड़ाकर कुचला गया आपके सम्बन्धियों को एक स्थान से दूसरे स्थान फ़िराया गया। यह स्पष्ट हो जाता है कि केवल आपको क़त्ल करना ही अभिष्ठ न था बल्कि ऐसे केन्द्र का अंत करना और जन-साधारण की दृष्टि में अपमानित करना अभिष्ठ था जो अधिपत्य प्राप्त संगठन के उद्देश्यों से विरोध रखता हो।

यह हैं हुसैन तथा यह है उनका स्मरणीय चमत्कार। हुसैन संसार से उठ गए परन्तु वह जीवित हैं उनका मिशन जीवित है तथा उनके कारण सत्य व इस्लाम का नाम जीवित हैं।

(इमामिया मिशन प्रकाशन न० 339)